पत्थर की कहानी :

इस पुस्तक में प्रकृति में पत्थर के निर्माण की समूची नैसर्गिक प्रक्रिया को बड़े सहज ढंग से समझाया गया है। लेखक ने आत्मकथा शैली में पत्थर के जीवन का यह वृत्तांत लिखा है। कैसे नदियाँ और समुद्र अपने साथ भूमि की मिट्टी व बालू बहाकर ले आती हैं और ये मिट्टी समुद्र के किनारे जमा होती रहती हैं। समुद्री पानी के साथ सीपियों, स्टार फिश जैसे समुद्री जीव भी इनके बीच पहुंचते रहते हैं और ये यहीं पर अपना जीवन–यापन पूरा करके मर जाते हैं तथा अपने पीछे अपने शरीर के कंकाल या अन्य आकृतियों को अवशेष (जीवाश्म) के रूप में छोड़ जाते हैं। हजारों–लाखों वर्ष की लम्बी अवधि के दरम्यान धूप, बारिश, बर्फ, आंधी–तूफान, वनस्पतियों के विकास आदि अनेक प्राकृतिक कारकों के प्रभाव व क्रियाओं के फलस्वरूप पत्थर का निर्माण होता है। इसी समूची प्रक्रिया को रोचक अंदाज में जानने का अवसर देती है प्रख्यात भारतीय भूवैज्ञानिक दाराशा नौशेरवां वाडिया द्वारा लिखी यह पुस्तक 'पत्थर की कहानी'।

लेखक के बारे में :

दाराशा नौशेरवां वाडिया (1883–1969) भारत के महान भूवैज्ञानिक थे। उन्होंने कठोर व सतत् परिश्रम द्वारा भारतीय भूविज्ञान के क्षेत्र में अनेक महत्वपूर्ण योगदान दिए तथा उसमें अपनी अमिट छाप छोड़ी। हैदराबाद स्थित नेशनल जियोफिजिकल रिसर्च इंस्टीट्यूट तथा पणजी, गोवा स्थित नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ ओशिनोग्राफी की स्थापना व संचालन के साथ वह बहुत अभिन्न रूप से जुड़े थे। इंडियन ब्यूरो ऑफ माइन्स (1948) और एटामिक मिनरल्स डिवीजन (1948–69) के वह संस्थापक निदेशक भी थे। वाडिया भारतीय भूसर्वेक्षण विभाग के उन भूवैज्ञानिकों में से एक थे जिनके अग्रणी कार्य ने भारत में भूविज्ञान अन्वेषणों की आधारशिला रखी। भारतीय भूविज्ञान पर उनके अधिकांश अवलोकन और व्याख्याएं आज भी मान्य हैं। नंगा पर्वत रूपी ग्रंथि (नॉट) के इर्द–गिर्द की पर्वत श्रृंखलाओं के रूप में बनने वाले अनोखे समकोण पार्श्वी मोड़ (नी–बैंड) के लिए दी गई, उनकी व्याख्या आज भी प्रांसगिक व उल्लेखनीय है। भूविज्ञान में शोध को बढ़ावा देने के उद्देश्य से उन्होंने देहरादून में इंस्टीट्यूट ऑफ हिमालयन जियोलॉजी की स्थापना किया।

सन् 1935 में एम.एस. कृष्णन और पी.एन. मुखर्जी के साथ वाडिया ने संयुक्त रूप से भारत का पहला मृदा मानचित्र प्रकाशित किया था। भारतीय विद्यार्थियों के लिए भूविज्ञान पर पाठ्यक्रम तैयार करना भी वाडिया का एक महत्वपूर्ण योगदान था। भारत सरकार ने वाडिया द्वारा भूविज्ञान में किए गए योगदान को सम्मानित करते हुए सन् 1945 में उन्हें भूवैज्ञानिक राष्ट्रीय सलाहकार नियुक्त किया। 1957 में वाडिया रॉयल सोसाइटी ऑफ लंदन के फैलो चुने गए और सन् 1958 में भारत सरकार ने उन्हें पद्म भूषण से सम्मानित किया।

ISBN No. 978-81-7480-220-0 ₹ 25.00

विज्ञान प्रसार
विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार
ए–50, इंस्टीट्यूशनल एरिया, सैक्टर–62, नोएडा–201 309, उ0प्र0 (भारत)
फोन : 91–120–240 4430, 35, फैक्स : 91–120–2404437
वेबसाइट : http://www.vigyanprasar.gov.in

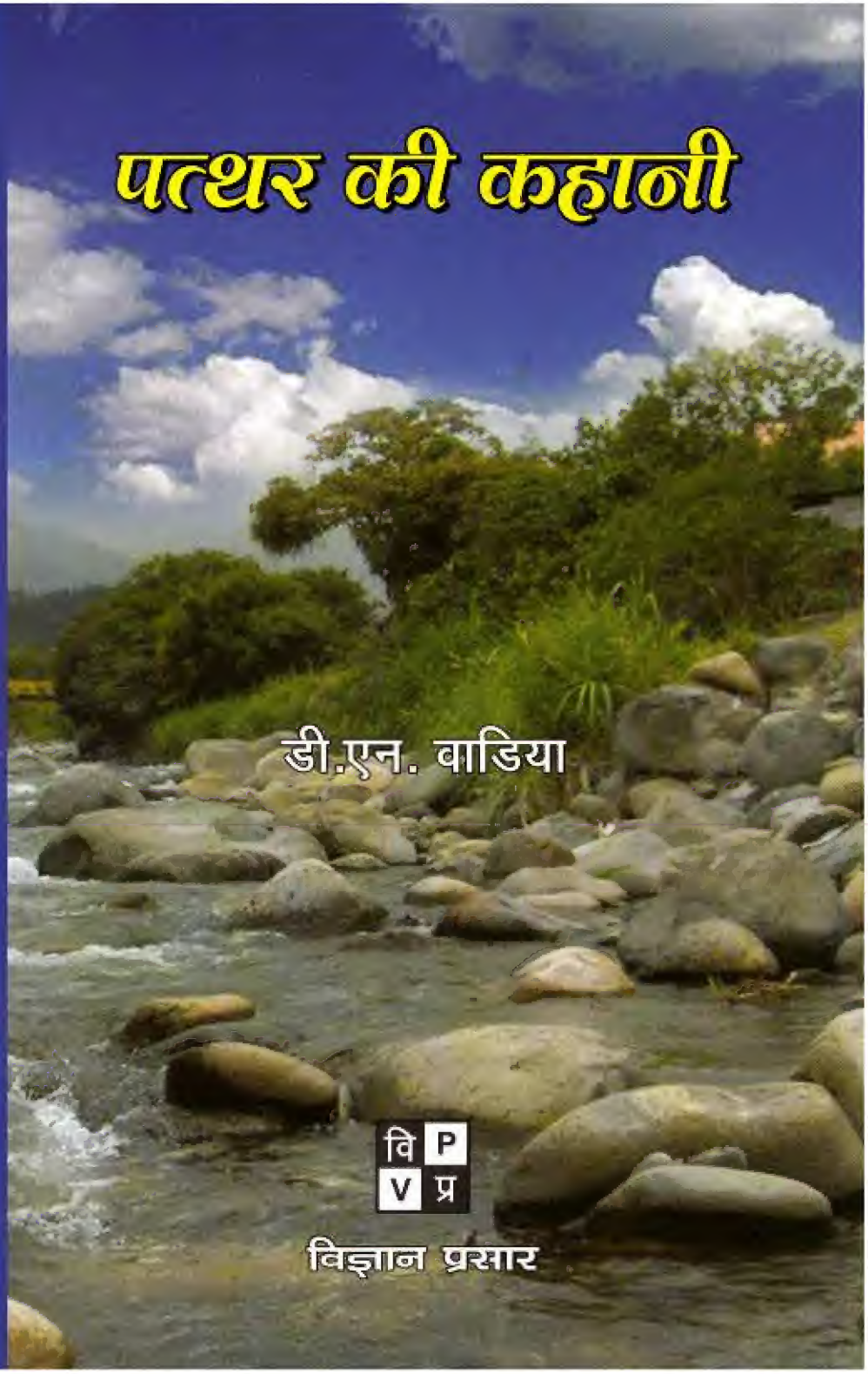

पत्थर की कहानी

डी.एन. वाडिया

अनुवादक
प्रेमपाल शर्मा

विज्ञान प्रसार

प्रकाशक
विज्ञान प्रसार
ए–50, इंस्टीटयूशनल एरिया,
सेक्टर–62, नोएडा – 201 309 (उ0प्र0), भारत
फोन : 0120–2404430, 35
फैक्स : 0120–2404437
इंटरनेट : http://www.vigyanprasar.gov.in
ई–मेल : info@vigyanprasar.gov.in

सर्वाधिकार सुरक्षित

पत्थर की कहानी
लेखकः डी.एन.वाडिया

समग्र पर्यवेक्षण : डॉ. सुबोध महंती
अनुवादक : प्रेमपाल शर्मा
प्रकाशन पर्यवेक्षण : सोमेश झिंगन, मनीष मोहन गोरे, धीरेन्द्र कुमार
संपादन : मनीष मोहन गोरे
पृष्ठ योजना एवं आवरण : नितिन गर्ग
चित्रांकन : प्रवीन नरेश

ISBN : 978-81-7480-220-0

मूल्य : रू.25/–

मुद्रक : सोनेक्स प्रिंट पैक प्रा. लि., गाजियाबाद

प्रकाशकीय

विज्ञान प्रसार की स्थापना सन् 1989 में समाज में व्यापक रूप से वैज्ञानिक जागरूकता लाने के मुख्य उद्देश्य के साथ विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार द्वारा किया गया था। वर्ष 1994 से विज्ञान प्रसार ने विधिवत रूप से लोकप्रिय वैज्ञानिक पुस्तकों का प्रकाशन आरम्भ किया और हिंदी, अंग्रेजी सहित दूसरी भारतीय भाषाओं में अनेक श्रृंखलाओं के अंतर्गत अब तक 250 से भी अधिक पुस्तकों का प्रकाशन किया गया है।

विज्ञान प्रसार ने जन सामान्य में वैज्ञानिक अभिरुचि का विकास करने के उद्देश्य से विश्व–प्रसिद्ध प्रेरक विज्ञान क्लासिक के पुनर्मुद्रण लाए। प्रकाशबत्ती का रासायनिक इतिहास (माईकल फैराडे), मेरा दोस्त मिस्टर लीकी, हर चीज कहती है अपनी कहानी (जे.बी.एस. हाल्डेन) और चार्ल्स डार्विन की आत्मकथा (चार्ल्स डार्विन) जैसे क्लासिक के पुनर्मुद्रण लोगों को बेहद पसंद आए। इसी श्रृंखला के अंतर्गत प्रख्यात भारतीय भूवैज्ञानिक दाराशा नौशेखां वाडिया द्वारा लिखी यह पुस्तक 'पत्थर की कहानी' आपके हाथों में है। प्रख्यात विज्ञान संचारक श्री अरविन्द गुप्ता ने इस पुस्तक की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया और विज्ञान प्रसार द्वारा इसके प्रकाशन का सुझाव दिया। इसकी मूल अंग्रेजी कृति से हिंदी अनुवाद श्री प्रेमपाल शर्मा द्वारा किया गया जो कि हिंदी के जाने–माने साहित्यकार और टिप्पणीकार हैं। विज्ञान प्रसार इस पुस्तक को सामने लाने में इन दोनों व्यक्तियों के प्रति आभारी है। इस पुस्तक में पत्थर के प्राकृतिक निर्माण की कहानी बड़ी ही रोचक शैली में प्रस्तुत की गई है। हमें आशा है कि यह पुस्तक आप सभी सुधि पाठकों को पसंद आएगी।

प्रमुख
प्रकाशन कार्यक्रम,
विज्ञान प्रसार

11 जून, 2013

अनुवादक की ओर से

अपने विद्यार्थी जीवन को याद करूं तो विज्ञान के विषयों में मेरी सबसे ज्यादा रूचि जीव विज्ञान में थी और उसमें भी 'विकासवाद' में और ज्यादा । लैमार्क, डार्विन से लेकर मिलर आदि तक सभी अध्ययन इतने रोचक और रोमांचकारी थे कि उन्हें बार–बार पढ़ने को मन करता । इस पढ़े हुए के बरक्स जब चारों तरफ की दुनिया जीव–जन्तु, पौधे, चट्टान, पहाड़, समुद्र को देखते तो और नये कौतूहल, नये प्रश्न मन में पैदा होते । फिर उनके उत्तरों की तलाश। निःसंदेह बीच–बीच में धर्म की आड़ में अंधविश्वासों के जाले भी इससे साफ होते रहते।

'पत्थर की कहानी' भी पृथ्वी पर जीवन के शुरूआती विकास का एक हिस्सा है । पत्थर के अपने ही शब्दों में आत्मकथा । करोड़ों साल पहले पत्थर कहां से चलकर कब, कहां पहुंचा । कभी समुद्र की तलहटी में तो कभी पृथ्वी पर सैंकड़ों बार आये परिवर्तन, आलोड़न से किसी महाद्वीप के किसी पहाड़ पर और फिर अचानक बहकर नदी की रेत में तब्दील होता । धूप, रोशनी, मौसम की मार खाता और फिर उसी से एक दिन जीवन की शुरूआत करता, देखता। हजारों हजार साल की पत्थर की इस यात्रा की कहानी पृथ्वी पर जीवन की शुरूआत का भी मुकम्मिल बयान है ।

जाने–माने भारतीय मृदा वैज्ञानिक द्वारा बहुत धैर्य से लिखा गया रोचक विवरण।

उम्मीद है कि नयी पीढ़ी में विज्ञान के प्रति रूचि जगाने में यह पुस्तक महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगी ।

प्रेमपाल शर्मा

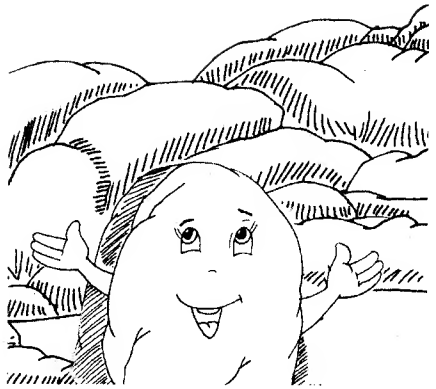

पत्थर की कहानी

खुदा का काम बहुत धीरे–धीरे चलता है
हजारों सालों तक
परत दर दरत,
उसने पृथ्वी बनायी,
इसे रूप दिया, मजबूती दी,
सेंकड़ों खूबसूरत चीजें बनायी
और भर दिया उनसे
जमीन, समुन्दर को
सूरज को करधनी पहनाकर
सजा दिया धरती को।

एक बार मेरी मुलाकात एक कंकड़ से हुई। उन्हीं कंकड़ों से जिन्हें आप झेलम नदी और आस–पास रोज देखते हैं और

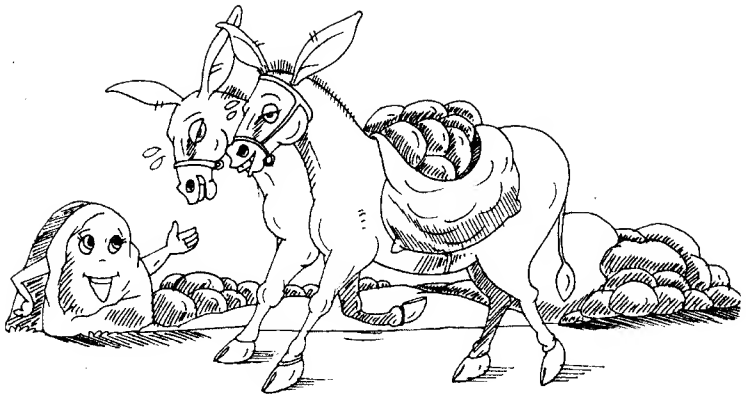

जिन्हें रोज गधे अपनी पीठ पर लादे इधर–उधर ढोते हैं। पिछले कुछ सालों से रोज–रोज उन्हीं के साथ रहते, उठते, बैठते, खेलते मेरे कामों ने उस कंकड के अंदर एक सहानुभूमि पैदा कर दी थी। मेरी जिज्ञासा को शांत करने के लिए अब उसने अपने अतीत की कहानी इस प्रकार बयां कीः–

मेरा इतिहास बहुत लम्बा है और यह कहानी अनंत साहसिक कारनामों से भरी पड़ी है। मेरी पौराणिकता/प्राचीनता को मापने के लिए जो काल निर्धारित किया जाता है वह मनुष्य की समझ में भी मुश्किल से आएगा। हिमालय पर्वत श्रृंखला और भारतीय महाद्वीप को घेरे पूर्व–पश्चिम में समुद्र जिन्हें मनुष्य के लिए समय और शाशवत का प्रतीक माना जाता है, मैं उन सब से गुजरा हूँ। इन युगों को गिना भी नहीं जा सकता। बड़े–बड़े समुद्र, महाद्वीप, पहाड़–इनका जन्म और उनको खत्म होते मेरी आँखों ने देखा है और दुनिया में जो चीजें आज दिखाई दे रही हैं, ये तो इतनी लम्बी यात्रा में अभी–अभी आई हैं।

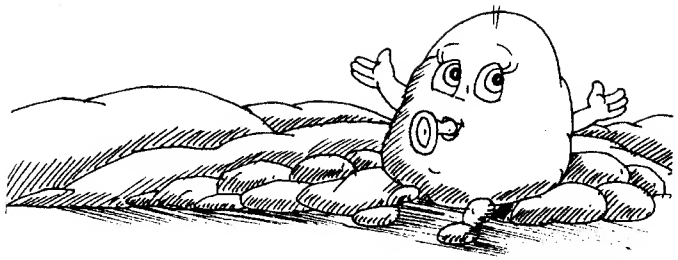

जब मैं पैदा हुआ, यह दुनिया अपने शैशवकाल में थी। आज की दुनिया से बिलकुल अलग। इतनी अलग कि मैं अपने जन्म स्थान, देश के भूगोल को भी याद नहीं कर सकता। इतना जरूर दावे से कह सकता हूँ कि आज के उत्तर भारत और पंजाब का बहुत बड़ा हिस्सा समुद्र के अन्दर था जिसके तट, मध्य एशिया के पठारों तक जाते थे। इसका दक्षिणी तट दक्षिण महाद्वीप का हिस्सा थे। आज का दक्षिण तो इसका एक बहुत छोटा हिस्सा था। दक्षिण की ओर एक आभूषण की तरह सुन्दर श्रीलंका द्वीप का तो कहीं अता–पता ही नहीं था। श्रीलंका और दक्षिण का पठार मिलकर भूमध्य रेखा तक फैले हुए थे। शायद पक्का नहीं कह सकता लेकिन पश्चिम में मेडागास्कर और पूर्व में आस्ट्रेलिया था। इस भूमि के बारे में मुझे इतना साफ–साफ याद है, अब तक आपको पता लग ही गया होगा कि यह मेरे जन्म से संबंधित है। मौजूदा सहयाद्री (पश्चिमी घाट) से लेकर उत्तर में पामीर के पर्वतों तक एक लम्बी और ऊंची पर्वत श्रृंखला थी। आज की अरावली पर्वत श्रृंखलाएं इन ऊंचे पर्वतों के जीर्णशीर्ण अवशेषों से बनी हैं भारत की पहाड़ियां। इसका बहुत सारा हिस्सा मेरे और मेरे जैसे कंकड़–पत्थरों की पीढियों में समाया हुआ है। तो उन दिनों मेरे वक्त की दुनिया का यह रूप था। जीवित प्राणियों का तो दूर–दूर

तक नामो–निशान नहीं था और यदि कहीं था भी तो आज से बिलकुल अलग। आप कोशिश करके भी अंदाजा नहीं लगा सकते। आप पूरी तरह से ऐसी उजाड़, बेरंग दुनिया की कल्पना नहीं कर सकते जिसमें आगे चलकर सैकड़ों तरह के जीव जन्तु विकसित हुए। न चार पैरों वाले शिकारी जानवर थे और न

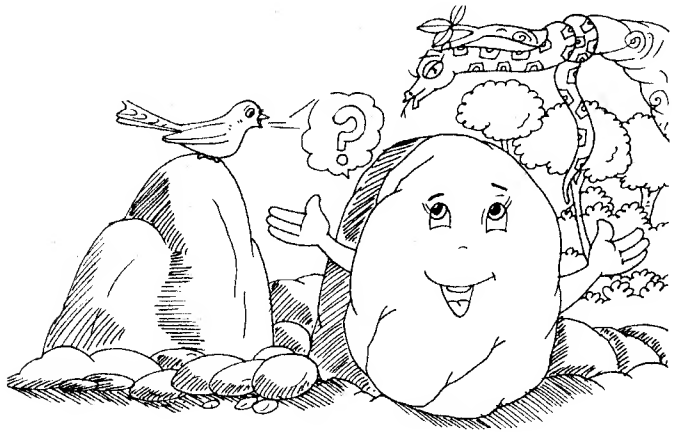

उनके शिकार। न कोई चिड़िया चहचहाती थी और न काले जंगलों के बीच किसी साँप की आवाज आती। न मेढ़क थे, न मछली। समुद्र की अतल गहराई में भी कोई कीड़ा–मकोड़ा तक नहीं था। इन सबके पैदा होने में अभी देरी थी। इनकी शुरूआत से पहले बहुत नामालूम से सीपी जैसे कीड़े, सीपी, कोरल जैसे जीवधारी धरती पर आए। जीवधारियों ने समुद्र में पहले अपना जीवन शुरू किया। धरती पर तो अभी कुछ भी नहीं था। पर्वतों, घाटियों और मैदानों में भी काई, फर्न जैसी समुद्री घास, वनस्पतियां जरूर उग आई थीं। इनमें से कुछ आज पाई जाने वाली फर्न की

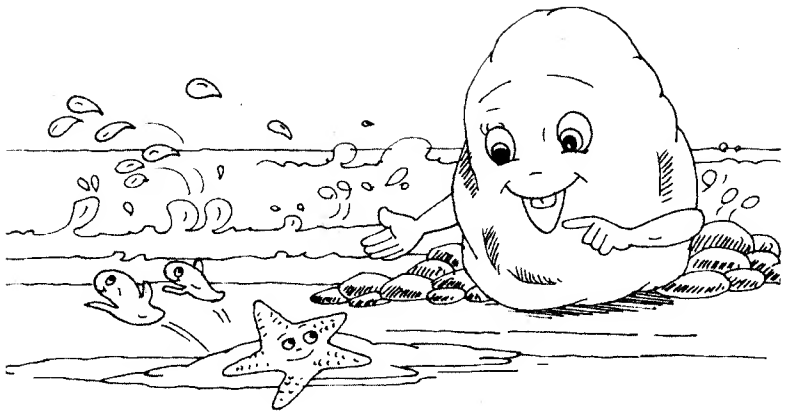

प्रजातियों के पेड़ दूसरे पेड़ों की तरह अकड़ में सिर तो उठाए रहते थे लेकिन यह कोरा दिखावा था क्योंकि उनमें न फूल आते थे, न फल और ये कोई बीज भी पैदा नहीं कर सकते थे। कीड़े–मकोड़ों की कुछ प्रजातियां इन पौधों के बूते अपना पेट जरूर भरती थीं।

मैं फिर से अपने जन्म की कहानी पर आता हूँ। दक्षिणी महाद्वीप के तट पर जहां आज हिमालय है वहां कभी समुद्र था। यही समुद्र मेरा जन्म स्थान था। इस समुद्र में उसके आसपास गुजरने वाली नदियां अपनी–अपनी गाद छोड़ती थीं। इस पानी में टनों मिट्टी, बालू होती थी जिसे नदियां जमीन से बहाकर लाती थीं। बारिश और नदियों द्वारा जमीन से समुद्र में पहुंचने वाली 9 लाख 73 हजार टन बालू और मिट्टी छोड़ती है। इसलिए गंगा ही नहीं भारत की नदियां जैसे ब्रह्मपुत्र, सिंधु, गोदावरी, नर्मदा, कृष्णा गंगा से भी ज्यादा मिट्टी बहाकर समुद्र में डालती हैं। इससे तुम अंदाजा लगा सकते हो कि पहाड़ियों और धरती का कितना कचरा ये नदियाँ प्रतिवर्ष बहाकर ले जाती हैं। एक

अनुमान के अनुसार प्रति 6000 वर्षों में धरती एक फीट नीचे हो जाती है। यह आज हो रहा है और पहले भी हो रहा था। यह अटूट सत्य है। हमारी बात पर यकीन कीजिए क्योंकि धरती के आरम्भ से हम इसके गवाह रहे हैं।

वर्तमान अतीत की कुंजी होता है।

समुद्र की अतल गहराइयों के नीचे सफेद बालू की चादर के रूप में, मैं लेटा हुआ था। नदियां हर वर्ष बाढ़ में मिट्टी और बालू लाती रहीं और हर पुरानी परत के ऊपर नई परत चढ़ती गई। समुद्र की तलहटी में परत–दर–परत ढीली–ढीली बालू की परतों के बीच मेरी मुलाकात जीवित प्राणियों से हुई। उनमें से कुछ पानी में फुदक कर चले गए तो कुछ उस बालू पर जमकर बैठ गए। उनमें से कुछ सीपियां, स्टार फिश थीं तो कुछ कोरल, स्पंज आदि थे जो आज पाए जाने वाले प्राणियों से बिल्कुल भिन्न अनगढ़, (प्रारम्भिक) अवस्था में थे। मरने के बाद भी इनकी काया वही बनी रहती थी जब तक कि अगली बाढ़ में आई परत उनके ऊपर आकर न जमे। इससे कार्बनिक और अकार्बनिक क्रियाएं शुरू हुईं। बालू के अकार्बनिक तत्वों ने कार्बनिक तत्वों की जगह तो ले ली लेकिन उसका संरचनात्मक ढांचा वैसा ही बना रहा। परिणामतः मरे हुए प्राणी के अवशेष पत्थर के रूप में बदल गए और वहीं पाषाण की कब्र में दबे रह आने वाले युगों और परिस्थितियों, तथ्यों के गवाह बने। जीवों के ये कंकाल या दूसरे अवशेष ऐसे ही पत्थरों की शक्ल में समुद्र की सतहों में पड़े रहे जिन्हें आप जीवाश्म कहते हैं। उनमें से कईयों पर ऐसे निशान बाकी हैं जो अपने समय के जीवन और परिस्थितियों के गवाह हैं।

परत या स्तर जो भी कहें, एक के ऊपर एक बनते रहे। पुराने के ऊपर नया और एक लम्बे युग के बाद हजारों फुट की मोटाई में तब्दील होते हुए। एक के ऊपर एक चढ़ती परत के वजन से सबसे पुरानी परत सख्त और सुडौल होती गई। चूना और सिलिकायुक्त पानी के संपर्क में आकर ये ढीली–ढाली परतों वाली चट्टानें सीमेंट के ढांचे में मजबूत चट्टानों में बदल गई; जिन्हें आज हम बलुआ पत्थर (sand stone) के रूप में जानते हैं। अब आपको पता लगा कि नदियों द्वारा जमीन से ढोई गाद, बालू से कैसे बनी। चट्टान और घाटियों का इस निर्माण में कोई योगदान नहीं।

अब तक मेरे दिन खुशहाल रहे। अपनी मूल जगह से चिपका और चारों तरफ पानी से सुरक्षित मैं कभी न समाप्त होने वाले निर्जीव जगत की उठा पटक के लिए अजनबी था। मेरी बैचेन और अनंत श्रम की जिन्दगी तो अभी शुरू होनी थी।

अभी तक भुरभुरी, रेतीले पत्थर, बलुआ की ये परतें समुद्र की तहों में सपाट स्थिति में पड़ी हुई थी फिर अचानक एक टाइटेनिक प्रक्रिया से धरती के अन्दर उलट–पुलट शुरू हुई। चारों तरफ के दबाव से परतें परस्पर जुड़ती और ऐंठती हुए धरती की सतह पर कई तरह की गर्त और द्रोण में बदल गईं। इन सारी उठा–पटक के परिणामस्वरूप हम समुद्र के पानी की गहराइयों से बाहर आने लगे। जल देवता नेपच्यून धीरे–धीरे अपनी पुरानी जगहों से खत्म होते गये, हमें एकदम अकेला छोड़कर। एक शब्द में कहूं तो समुद्र की कोख खाली होकर जमीन में बदल गई और यह टुकड़ा दक्षिणी महाद्वीप में जुड़ गया।

समुद्र की सतह का बाहर निकलकर पृथ्वी में बदलना आश्चर्यजनक तो है ही, समझने में भी बड़ा मुश्किल है। आप आश्चर्य से चकित रह जाएंगे कि इतनी बड़ी यह प्रक्रिया कैसे संभव हुई होगी। लेकिन यदि आप आस–पास देखें तो पता लगेगा कि क्या आपके चारों तरफ भी इससे मिलती जुलती प्रक्रियाएं नहीं हो रही हैं। इन्हें भी वैसी ही जिज्ञासा और गौर से देखिए। आप पाएंगे कि इनमें भी वैसा ही हो रहा है। क्या बोथनिया की खाड़ी से सैंकड़ों मील लम्बी स्वीडन की पट्टी नहीं बनी ? लीना के पूर्व में साइबेरिया का 600 मील का तट भी ऐसे ही समुद्र से बाहर आया था और आज भी यह प्रक्रिया जारी है। जापान के पूर्वी और दक्षिणी सीमांत/तट धीरे–धीरे ऊपर उठ रहे हैं। आप इनके निशान समुद्र तटों, किनारों पर देख सकते हैं और मछुआरों और समुद्री मल्लाहों से भी पूछ सकते हैं। यही परिवर्तन आपको लेब्राडोर, न्यू फाउंडलैंड और ग्रीन लैंड के आसपास के समुद्र और जमीन पर भी देखने को मिलेंगे। लेकिन वहीं क्यों, क्या ऐसे ही परिवर्तन भारत में नहीं हुए ? बड़े–बड़े मैदान ऐतिहासिक स्थल समुद्र के अंदर डूब गये या समुद्र के बीच में

पहुंच गये तो कुछ भाग पानी से निकलकर बाहर भी आ गये। काठियावाड़ का तट, मुम्बई महाद्वीप का पूर्वी तट और कोंकण तटों पर समुद्र और जमीन में आए इन परिवर्तनों के निशान देखे जा सकते हैं। ऐसा ही बहुत बड़े स्तर पर असम और चटगांव क्षेत्रों में हुआ है। लेकिन इतने बड़े भौगोलिक परिवर्तन कुछ वर्षों में शताब्दियों, या अनियमित भूचाल से नहीं हुए। यह बहुत धीरे–धीरे चुपचाप कई युगों के बाद संभव हुआ है। सैंकड़ों पीढ़ियों को पता भी नहीं चलेगा इन परिवर्तनों के होने या न होने का। समय रूपी बैंक के नाम प्रकृति के पास अपार असीमित संख्या में चैक होते हैं।

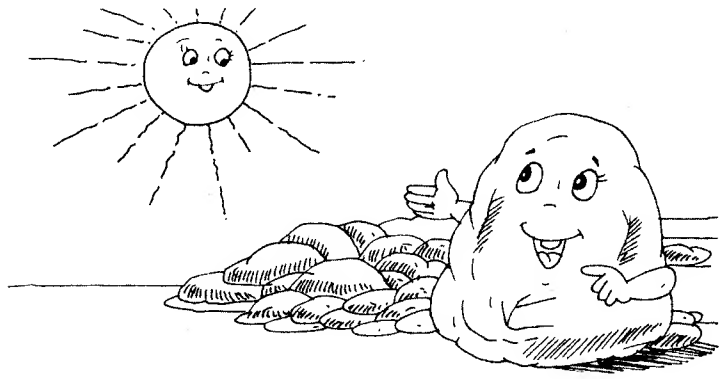

अब शुरूआत हुई हमारे मुश्किल समय की। धूप और रोशनी को पहली बार देखने की खुशी के बाद हमें धीरे–धीरे रोशनी का भी अहसास होने लगा। कभी बारिश, कभी बर्फ, आंधी–तूफान, गरमी–सरदी, रात–दिन चलने वाले आंधी–तूफान का असर जमीन और बालू की परतों पर पड़ने लगा। समय–बरबादी का

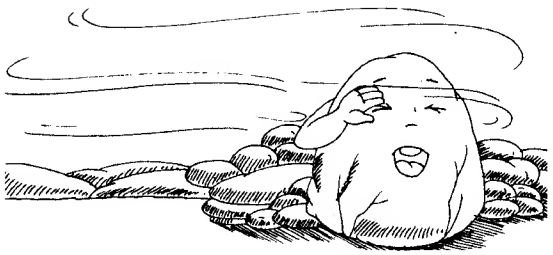

दूसरा नाम अपनी कुटिलताओं से इनको और बढ़ावा देता रहा। हवा में घुली गैसों और तेजाब की बारिश ने हमारे टुकड़े–टुकड़े कर डाले और बारिश के बाद हमें लगा हर बारिश और सूखे के बाद हमारी टनों बालू उसके साथ बहा के ले जाई जा रही है।

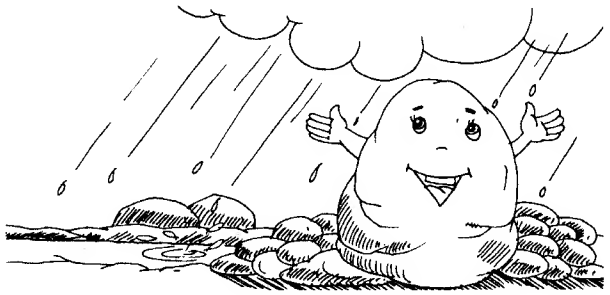

जमीन में दरार और गड्ढे पड़ते गये। कभी–कभी तो ये बड़ी घाटियों में बदल गये जिसमें पानी भर गया। इससे चट्टानों में अंदर तक अपघटन होने लगा। एक और प्रमुख कारण जिससे जमीन की परतों में परिवर्तन हुआ, वह था चारों तरफ वनस्पतियों का उगना। शुरू में तो लगा कि ये वनस्पतियां जमीन के टूटने–फूटने के खिलाफ वातावरण से रक्षा करेंगी लेकिन अपने कार्बनिक अम्लों, ऑक्सीजन, जो इनकी जड़ों के माध्यम से धरती

के अंदर प्रवेश कर गई थी, इसने चट्टानों की परतों को अंदर तक जल्दी छिन्न–भिन्न कर दिया। इस बीच लगातार होती बारिश ने समतल जमीन की सतह को लगातार प्रभावित किया। गहरी घाटियों में पानी इकट्ठा होता गया तो अंत में तेज धाराओं में तब्दील हो गया। इन तेज धाराओं ने और तेजी से जमीन के मुलायम हिस्से को अपने साथ बहाया जिससे पुरानी एकसार सतह और असमान होती गई। जो पहले एक समान पठार था, वे पानी की तेज धाराओं के चलते बड़ी घाटियों में वैसे ही बदलते गये जैसे किसी कारीगर ने छेनी से उन्हें बनाया हो। इस प्रकार हाल के इन सब पक्षों ने मिलकर धरती का चेहरा ही बदल दिया और इस रूप में ले आया जैसे आज दुनिया के सारे हिस्से दिखते हैं। निश्चित रूप से यह प्रकृति के लिए रोजमर्रा की बातें हैं जो हजारों सालों में वैसी ही स्वाभाविकता के साथ होती गईं जैसे कि हम चारों तरफ देखते हैं।

धरती की इस उठा–पटक के बीच मुझे पहाड़ी से घाटी में पटक दिया गया। सदा–सदा के लिए अपनों से दूर। उबड़–खाबड़ और नुकीले पत्थरों के बीच। आज जैसा अकेला दिखता हूँ, उसके एकदम विपरीत। वक्त बीतता रहा। समुद्री तूफानी धाराएं नदी के साथ हमें बहाती रहीं। हर बरसात, मौसम की गर्जनाओं के साथ हम एक–दूसरे से और पानी की धाराओं से टकराते रहे। दुनिया भर में घूमते और रगड़ खाते हम में से जो सबसे मजबूत थे उनकी भी शक्ल बदल गयी और सभी गोलाकार हो गये। लगातार चलते और सतत् रगड़ खाकर आकार में छोटे होने के बावजूद भी मैं बदला नहीं हूँ। इस अनंत टूट–फूट में यह जरूर

हुआ कि मेरे ज्यादातर साथी धूल और बालू में बदल गये। मेरी आंतरिक कठोरता और क्रिस्टल आकार की वजह से खुदा का शुक्र है कि मैं वैसा नहीं हुआ।

एक बार मैं फिर से कड़ी चट्टान से जुड़ गया। तभी टेथीस सागर के पेंदे की उथल–पुथल शुरू हुई जो बहुत लम्बे समय तक चलती रही और जिसने हमें जमीन के अन्दर हजारों फुट गहरे में जाकर छोड़ दिया। हमारे ऊपर भारी, बाहरी परतें जमती गईं और सारी दुनिया से बेखबर हम जमीन के प्लूटोनिक क्षेत्र में दबे रहे। जमीन के अन्दर की गरमी और दबाव के चलते हमने नया आणविक आकार लिया। जमीन की उन परतों के बीच दबे कितने युग और इतिहास गुजर गये, यह सब बताना मेरे लिये संभव नहीं है। मैं सिर्फ इतना कह सकता हूँ कि इस अवधि में भी भूगोल में दूर–दूर तक बड़े और व्यापक परिवर्तन हुए। जमीन और कई बड़े–बड़े पर्वत अपनी जगह से मिट गये थे।

कई नदियां, घाटियाँ और झीलें बनती और बिगड़ती गईं। दुनिया भर के देशों के तट ऐसे बदल गए कि उन्हें पहचानना भी मुश्किल है। संक्षेप में दुनिया का पूरा भूगोल ही बदल गया। विज्ञान के विद्वानों की भाषा में इस युग को पृथ्वी के इतिहास में मिसोजोइक युग के नाम से जाना जाता है। मिसोजोइक तीन भौगोलिक अवस्थाओं ट्राइएसिक, ज्यूरोसिक और क्रिटेशस का प्रतिनिधित्व करता है।

उसके बाद शुरूआत होती है काइनोजोइक युग की। इसने मिसोजोइक समय की परिस्थितियों को समाप्त करके समुद्री

सतहों को उलट–पुलट दिया। टेथी की पेंदी उठ कर पुरानी स्थिति में पहुंच गई और धीरे–धीरे समाप्त भी हो गई। उसकी जगह बचे हैं आज के कैस्पिअन और भूमध्य सागर–नाम मात्र के अवषेषों के रूप में ।

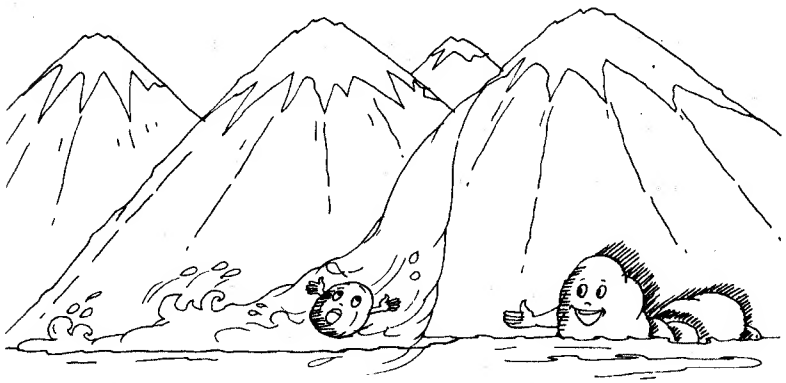

उसके बाद भयानक परिवर्तनों से धरती की सतह कहीं सिकुड़ गई तो कहीं व्यवस्थित रूप में आ गई। प्रकृति का यह परिवर्तन अभी पूरा नहीं हुआ था और वह संतुलित होने की कोशिश कर ही रहा था कि अचानक एक मौसम की मार ने मुझे फिर से चट्टान से बाहर निकाल लिया दर–दर भटकने के लिए। समुद्री तटों और नदियों के खादर में घूमने के लिए। उसके बाद क्या–क्या हुआ, यह सब बताकर मैं आपके धैर्य की परीक्षा नहीं लूंगा। लगातार और कभी न समाप्त होने वाले परिवर्तन तो मेरी किस्मत में लिखे ही थे। नदियां और पहाड़ों के बीच गिरते, पड़ते, टकराते यह क्रम जारी रहा जब तक कि मैं हिमालय की गोद में नहीं पहुंच गया। पंजाब में जहां आज शिवालिक पहाड़ी हैं, वहां

नदियों के मुहाने थे और जो जगह वहां मुहानों में लाई गई, मिट्टी से उभर रही थी, वहां पर मुझे छोड़ दिया गया। यह वही जगह है जहां मेरी आपसे मुलाकात हुई।

इस प्रकार युग–युग की मेरी घुमक्कड़ी को थोड़ी राहत मिली लेकिन इससे मेरी यात्रा खत्म नहीं हुई।

जब से धरती का जन्म हुआ और जहां–जहां से मैं गुजरा और इस बीच जो जीवन–जगत मैंने देखा उस सब की जानकारी मेरे पास है। संक्षेप में मैं उन्हीं में से कुछ महत्वपूर्ण प्राणियों, बाशिंदों के बारे में बताऊंगा जो एक के बाद एक धरती को आबाद करते गये। मैंने अपनी बात की शुरूआत में आपको बताया था कि शुरू में दुनिया की हालत कैसी खस्ता थी और भूगर्भ शास्त्र की भाषा में इस युग को पेलियोजोइक युग के नाम से जाना जाता है। उन दिनों सभी जीवित प्राणी बहुत सरल और आरंभिक किस्म के थे। आज के विभिन्न और विशेष किस्म के पेड़ पौधे और जीव–जन्तुओं की तुलना में एकदम उलट। लगता है कि शुरू के इन जीव–जन्तुओं पर प्रकृति ने अपने नौसिखिया हाथों को आजमाया था । लेकिन इनके समाप्त होते ही कुछ और जीव पैदा हुए और पुरानी प्रजातियां सदा–सदा के लिए खत्म हो गयीं। आने वाली पीढ़ियों की मुख्य विशेषता यह थी कि शुरू के साधारण जीवों के मुकाबले ये ज्यादा उच्च श्रेणी के थे। प्रजातियां कई गुना बढीं और जीवन–जगत ज्यादा विविध होता गया। मेरे जन्म के बाद का एक महत्वपूर्ण पड़ाव बड़े–बड़े आकार और डील–डौल वाली मछलियों की शुरूआत थी। वे आज की मछलियों से एकदम अलग थीं। मत्स्य युग की समाप्ति के बाद भूगर्भ

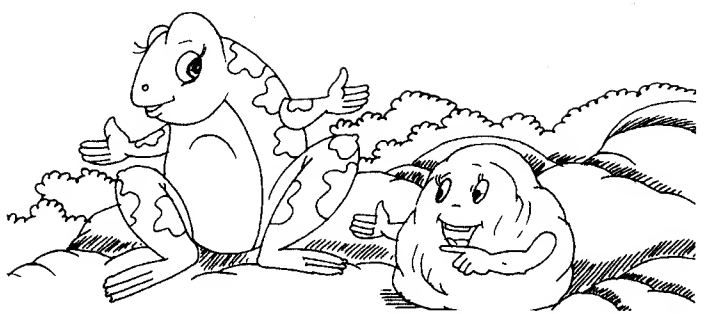

इतिहास का अकेला महत्वपूर्ण युग आता है कार्बनिफेरस युग। इस युग में पहली बार मेढ़क जैसे जीव धरती पर पैदा हुए। पृथ्वी पर निरंतर बढ़ते पेड़, पौधे, फर्न के जंगलों से धरती का वातावरण तेजी से बदल रहा था। लेकिन वनस्पतियों के इस जंगल में यदि सबसे ऊंचा पौधा था तो वह फर्न का था। इन जंगलों की उदास एकरसता को तोड़ा मेढ़क जैसे बड़े प्राणी ने जो उस समय के प्राणियों में सबसे उच्च प्रजाति के थे। उनका बेडौल रूप उन दिनों के प्राणी जगत के सिरमौर बनने लायक नहीं था। इस बीच मिसोजोइक युग के बारे में मुझे कोई व्यक्तिगत जानकारी नहीं है क्योंकि तब मैं जमीन के नीचे दबा हुआ था। मेरा पड़ोसी चूना पत्थर (lime stone) है और यह जुरैसिक समय और उस समय के बारे में मुझे बताया करता है। इसके अन्दर उन दिनों के जीवन के बहुत से अवशेष भी छिपे हुए हैं। जल, जमीन और हवा में चारों तरफ विशाल आकार के सरीसृप रहते थे। आज की धरती पर रहने वाले जानवरों की जगह उन दिनों यही विकराल, अलौकिक व अनेकों आकार वाले सरीसृप रहा करते थे। आप सोच भी नहीं सकते कि एक छिपकली का आकार एक हाथी के बराबर भी हो सकता है। इसके बराबर यदि कोई जीव था तो वह

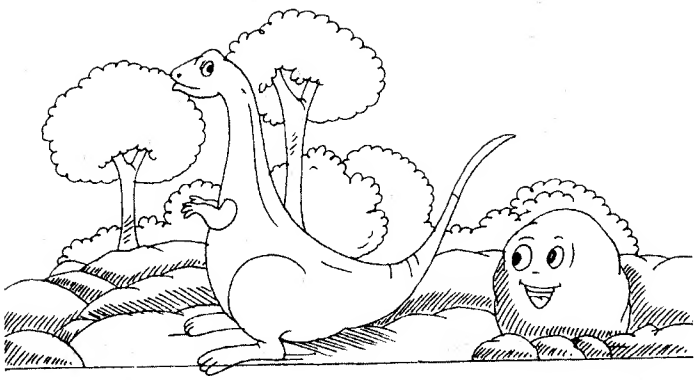

था समुद्र का राजा प्लीसिओसॉरस (Plesiosaurus)। इसका मुंह मगरमच्छ के जैसा था तो गर्दन अजगर जैसी और पेट भैंसे जैसा। इसकी छिपकली की सी पसलियां ओर व्हेल मछली के से पेडल थे। तीस फीट से ज्यादा लम्बा और ड्रेगन मछली जैसा इक्थियोसॉरस (Ichthyosaurous) अपने चारे की तलाश में जब पानी के नीचे घूमता था तो आधे प्राणी जो एक–एक फुट मोटे होते थे, वे भी देखते ही प्राण छोड़ देते थे। टेरोसॉर्स (Pterosaurs) जैसे ड्रैगन, पंख वाले ड्रैगन हवा में चारों तरफ उड़ते फिरते थे और इन विचित्र प्राणियों से धरती पटी पड़ी थी। दुनिया भर में फैली जुरैसिक और क्रिटेशियस चट्टानों में इन सब के प्रमाण मौजूद हैं। इन चट्टानों में इन अनोखे जानवरों की हड्डियां और दूसरे अवशेष पथरीले जीवाश्म के रूप में उपलब्ध हैं ।

मिसोजोइक युग की समाप्ति से पहले ये महाकाय सरीसृप धरती से समाप्त हो गये । अपने बड़े आकार और विशिष्ट शरीर की जिन विशेषताओं और उत्कृष्टता की वजह से वे अपने समय के जीवों से बेहतर थे, बदली हुई भविष्य की परिस्थितियों के

लिहाज से वे सामंजस्य नहीं बिठा पाए और जीवित रहने के संघर्ष में हार गये। इसके विपरीत जो फुर्तीले और पतले शरीर के जीव थे, केवल वही बचे। धरती पर इनका नामो निशान समाप्त होने से पहले एक और उच्च श्रेणी की प्रजाति अस्तित्व में आई जिन्हें पक्षी वर्ग कहा जाता है। यह सुनने में विचित्र लगता है कि ये पक्षी इन्ही सरीसृप जीवों से पैदा हुए थे। शुरू में ये पक्षी की शक्ल के सरीसृप थे जो आगे चलकर कुछ–कुछ सरीसृप विषेषताओं के

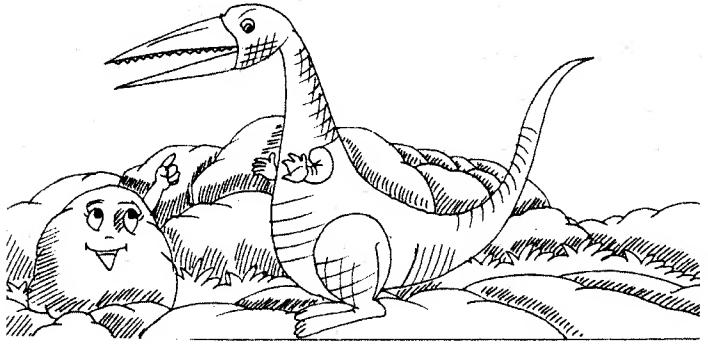

साथ पक्षी के रूप में विकसित हुए। सबसे पहले इस किस्म के जो जीव बने, उन्हें भूगर्भ विज्ञान की शब्दावली में आर्कियोप्टेरिक्स कहा जाता है । उनकी चोंच आजकल के पक्षियों की तरह सुन्दर नहीं थी, बल्कि उसकी जगह जबड़े थे जिसमें नुकीले जड़े हुए दाँत थे। इनकी पूंछ छिपकली की तरह हिलने वाली और लम्बी थी ।

मीसोजोइक युग के बाद आता है आज के जीव–जन्तुओं और वनस्पतियों का युग। इस युग में विषालकाय स्तनधारी जीव धरती के राजा थे। मत्स्य, उभयलिंगी, सरीसृप, पक्षियों के पुराने

खानदान समाप्त हो गये और उनकी जगह आज के नये वंशजों ने ले ली। शुरूआत के इन चौपायों के शरीर में आकृति आदि की वे सभी विशेषताएं थीं जो आगे और विकसित होती चली गईं। आने वाले युगों में इनके रूप कई बार बदले और आज जो दिखता है, कालांतर में वे उस रूप में बन पाए। बड़े–बड़े मांसाहारी जीव जैसे–घोड़े, सूअर, ऊँट, हाथी, गेंडे, दरियाई घोड़े, हिरण और बन्दर जैसे दूसरे जानवर धरती पर आए। इस प्रकार जीवन का महान प्रवाह चलता रहा। उस युग के लगभग अन्तिम छोर पर आता है मनुष्य के आगमन की शुरूआत के साथ ही मौसमों के बड़े परिवर्तनों की शुरूआत हुई। दुनिया का उत्तरी हिस्सा बर्फ की चादरों से ढक गया। यहां तक कि उत्तरी पंजाब में बहने वाली नदियां बर्फ के ग्लेशियरों में बदल गईं। 39 डिग्री देशांतर तक दुनिया का पूरा उत्तरी हिस्सा हिमयुग में तब्दील हो गया। तब तक हिमालय पर्वत अस्तित्व में आ गया था। फिर धीरे –धीरे बर्फ उतरनी शुरू हुई और मौसम सुहावना होने लगा।

अब तक मैंने आपको अपनी आत्मकथा की संक्षिप्त रूप रेखा का बयान किया है । आगे दूर भविष्य में मेरा क्या होगा उसके बारे में भी मैं कुछ–कुछ सोचता हूँ। क्या आपने कभी नदी में बहते पानी की कल–कल ध्वनि सुनी है ? यह दरअसल वह शोक गीत है जो मेरे हमसफर भाई अपने को खंड–खंड हो कर अगोचर धूल बनने के दौरान गाते हैं । मेरा भी अंत वैसा ही होने वाला है। नदियों के तल पर नजर डालें तो आपको सब पता चल जाएगा। बरसात के मौसम में उफनती हजारों धाराएं बड़े–बड़े पत्थरों को अपनी जगह से उखाड़कर, बहाकर ले जाती हैं। बहते हुए ये आपस में रगड़ते, टकराते, टुकड़े–टुकड़े होते जाते हैं।

छोटी धाराओं में बहते हुए ये पहुंचते हैं बडी झेलम जैसी नदियों में, और बारीक टुकड़ों में बदलने के लिए और फिर झेलम नदी के साथ ये जा गिरते हैं सिंधु नदीं में। वहां इसी तरह की बहाई गई मिट्टी में ये सब मिलते हैं और उत्तर भारत की अनेक छोटी नदियों से होकर पूरे उत्तरी भारत में फैल जाते हैं । बड़े शिलाखंड

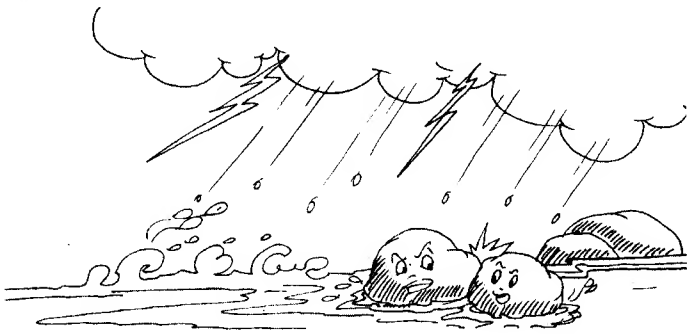

(boulders) छोटे शिलाखंडों में बदल जाते हैं और वे आगे फिर छोटे कंकड़ों में। ये छोटे–छोटे पत्थर फिर टुकड़े–टुकड़े होकर बालू और धूल में बदल जाते हैं। तत्पश्चात ये सड़ गलकर मिट्टी और धूल के छोटे–छोटे कणों में परिवर्तित हो जाते हैं। सिंधु नदी की यह यात्रा खत्म होती है सागर के मुहाने पर जहां यह सारा सामान (कंकड़, पत्थर, बालू) डाल दिया जाता है, समुद्र की सतह पर क्षैतिजीय परतों के रूप में शांति से कुछ दिन रहने के लिए। इसमें से आगे चलकर फिर बनते हैं बलुआ, भुरभुरे पत्थर, ईंट, चूना गारा। भविष्य में फिर कभी इसे इन गहराइयों से निकाला जाएगा और उससे नई जमीन, पर्वत, महाद्वीप बनेंगे। इस तरह प्रकृति का यह चक्र कभी न समाप्त होने वाली यात्रा के

रूप में चलता रहता है। विध्वंस और निर्माण की लगातार चलने वाली वैसी ही यात्रा जैसा कि विगत में हुआ था और जिसका बयान एक पत्थर के रूप में मैंने अभी किया है।